भारतीय संस्कृति का मूल आधार स्तम्भ तथा प्राणतत्त्व वैदिकवाङ्मय, मनीषियों की ज्ञान-पिपासा का समाधान सदियों से करता आ रहा है। भारतीय धर्म, दर्शन, अध्यात्म, आचार-विचार, रीति-नीति, विज्ञान-कला - ये सभी वेद से अनुप्राणित हैं। जीवन और साहित्य की ऐसी कोई विधा नहीं है जिसका बीज वैदिक वाङ्मय में न मिले।

भारतीय मान्यता के अनुसार वेद ब्रह्मविद्या के ग्रन्थभाग नहीं, स्वयं ब्रह्म हैं - शब्द ब्रह्म हैं। वे समग्र आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक ज्ञान की निधि हैं। वेद को देव, पितर एवं मनुष्यों का सनातन-चक्षु कहा गया है। मनु के अनुसार तीनों ~~काल~~ काल में इनका उपयोग है और सब वेद से प्राप्त होता है-

"भूतं भव्यं भविष्यं च सर्वं वेदात् प्रसिध्यति"।

वेद ज्ञानराशि होने तथा सर्वव्यापक तत्त्वदर्शन आदि से समलंकृत होने के कारण विश्व के विभिन्न देशों के विद्वानों का ध्यान भी इस ओर आकृष्ट हुआ और विद्वत्समाज ने एक-कण्ठ होकर भारतवर्ष की इस महान् निधि की श्रेष्ठता को स्वीकार किया।

वेद किसे कहते हैं?- इसपर अनेक विद्वानों ने अपना मन्तव्य दिया है। सुप्रसिद्ध वेदभाष्यकार महान् पण्डित सायणाचार्य अपने वेदभाष्य में लिखते हैं कि 'इष्टप्राप्त्यनिष्ट-परिहारयोरलौकिकमुपायं यो ग्रन्थो वेदयति स वेदः' अर्थात् इष्ट फल की प्राप्ति के लिए और अनिष्ट वस्तु के त्याग के लिए अलौकिक उपाय जो ज्ञानपूर्ण ग्रन्थ सिखलाता है, समझाता है, उसको वेद कहते हैं।

निरुक्त का कथन है कि जिसकी कृपा से अधिकारी मनुष्य सद्विद्या प्राप्त करते हैं, जिसके कारण वे सद्विद्या के विषय में विचार करने के लिए समर्थ हो जाते हैं, उसे वेद कहते हैं।

Scanned with CamScanner

आर्यविद्यासुधाकर नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि -
"वेदो नाम वेद्यन्ते ज्ञाप्यन्ते धर्मार्थकाममोक्षा अनेनेति व्युत्पत्त्या चतुर्वर्गज्ञानसाधनभूतः ग्रन्थविशेषः।"
अर्थात्
पुरुषार्थचतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) विषयक सम्यक् ज्ञान होने के लिए साधनभूत ग्रन्थविशेष को वेद कहते हैं।

मनुस्मृति के अनुसार वेदों को ही श्रुति कहते हैं - 'श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयः'। श्रुति के लिए कहा गया है - "आदिसृष्टिमारभ्याद्यपर्यन्तं ब्रह्मादिभिः सर्वाः सत्यविद्याः श्रूयन्ते सा श्रुतिः" अर्थात् सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर जिसकी सहायता से बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों को सत्यविद्या ज्ञात हुई, उसे श्रुति कहते हैं।

वेदों से संस्कृतसाहित्य की जो उज्ज्वल धारा प्रवाहित हुई, वह अद्यावधि अक्षुण्ण रूप से प्रवाहमान हो रही है। वैदिक वाङ्मय के आधार पर गीता ही नहीं, सम्पूर्ण दर्शनशास्त्र, अखिल पुराण, निखिल धर्मशास्त्र और समस्त संस्कृत साहित्य की परम्परा प्रवाहित हुई है। आर्यों की संस्कृति, सभ्यता एवं मानसिक प्रवृत्तियों का जैसा सुन्दर परिचय वेदों में उपलब्ध है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है।

'वेद' शब्द के व्युत्पत्तिमूलक अर्थों की बड़ी सुन्दर विवेचना डॉ० जयमन्त मिश्र ने अपने लेख 'व्युत्पत्ति मूलक वेद-शब्दार्थ' में की है। इनके अनुसार 'वेद' शब्द के व्युत्पत्तिमूलक अर्थों से वेद की व्यापकता प्रमाणित होती है। पाणिनीय व्याकरण के अनुसार विभिन्नार्थक पाँच विद् धातुओं से 'वेद' शब्द निष्पन्न होता है, जो विभिन्न अर्थों को अभिव्यक्त करता है ~

(१) अदादिगणीय 'विद् ज्ञाने' धातु से करण में घञ् प्रत्यय करने से निष्पन्न वेद का अर्थ होता है - 'वेत्ति जानाति धर्मादिपुरुषार्थचतुष्टोपायान् अनेन इति वेदः'। अर्थात् जिसके द्वारा धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष-रूप पुरुषार्थ-चतुष्टय को प्राप्त करने के उपायों को जानते हैं, उसे 'वेद' कहा जाता है। प्रत्यक्षादि प्रमाणों से भी जिन विषयों का ज्ञान नहीं हो सकता, उनका भी ज्ञान वेद के द्वारा हो जाता है।

Scanned with CamScanner

(iii) दिवादिगण में पठित 'विद् सत्तायाम्' धातु से भाव में घञ् प्रत्यय करने से निष्पन्न 'वेद' शब्द अपने सनातन सत् रूप को बतलाता है। महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास ने 'वेद' शब्द के इसी सत् रूप का स्पष्ट प्रतिपादन करते हुए महाभारत में कहा है—

"अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा।
आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वाः प्रवृत्तयः॥"

(iii) तौदादिक 'विद्लृ लाभे' धातु से करण में 'घञ्' प्रत्यय करने पर निष्पन्न वेद शब्द 'विदन्ति अथवा विन्दते लभते धर्मादिपुरुषार्थान् अनेन इति वेदः' - इस तरह पुरुषार्थचतुष्टय-लाभरूप अर्थ को व्यक्त करता है। अर्थात् वेद से न केवल धर्मादि पुरुषार्थों को जानते हैं, अपितु उनके उपायों को समझते हैं तथा वेद के द्वारा उन्हें प्राप्त भी करते हैं। वेद निर्दिष्ट उपायों के द्वारा सविधि अनुष्ठान करने से पुरुषार्थों की सिद्धि होती है।

(iv) रुधादिगणीय 'विद् विचारणे' धातु से करण अर्थ में घञ् प्रत्यय के योग से निष्पन्न शब्द 'विन्ते विचारयति सृष्ट्यादिप्रक्रियाम् अनेन इति वेदः'— इस प्रकार सृष्टि-प्रक्रिया विचाररूप अर्थ को अभिव्यक्त करता है। तात्पर्य यह है कि युग के आरम्भ में विधाता जब नूतन सृष्टि-निर्माण की प्रक्रिया के विचार में उलझे रहते हैं, तब नारायण अपने वेदस्वरूप से ही उनकी समस्या का समाधान करते हैं और विधाता वेदनिर्देशानुसार पूर्वकल्प की तरह नयी सृष्टि करते हैं। महर्षि वेदव्यास ने श्रीमद्भागवत में इस विषय को स्पष्ट करते हुए कहा है—

"सर्ववेदमयेनेदमात्मनाऽऽत्माऽऽत्मयोगिना।
प्रजाः सृज यथापूर्वं याश्च मय्यनुशेरते॥" (3/10/1)

(v) चुरादिगणीय 'विद् चेतनाख्याननिवासेषु'- इस विद् धातु से चेतन-ज्ञान, आख्यान तथा निवास - इन तीन अर्थों का करण-अर्थ में घञ् प्रत्यय करने से निष्पन्न वेद शब्द सृष्टि के आदि में पूर्वकल्प के अनुसार कर्म, नाम आदि का आख्यान होना अर्थ प्रतीत होता है। वेद शब्द के इसी अर्थ को सुव्यक्त करते हुए महर्षि मनु ने लिखा है—

Scanned with CamScanner

"सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक्पृथक्।
वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक्संस्थाश्च निर्ममे॥ (1/21)

उपर्युक्त विभिन्नार्थक पाँच धातुओं से निष्पन्न वेद शब्द के अर्थों में सभी विषय सन्निविष्ट हो जाते हैं।

वस्तुतः वेदों ने जिन कर्मों का विधान किया है, वे धर्म हैं और जिनका निषेध किया है, वे अधर्म हैं। वेद स्वयं भगवान् के स्वरूप हैं। वे उनके स्वाभाविक श्वास-प्रश्वास एवं स्वयम्प्रकाश ज्ञान हैं। श्रीमद्भागवत में कहा गया है ~

"वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्ययः।
वेदो नारायणः साक्षात् स्वयम्भूरिति शुश्रुम॥"
(6/1/40)

Scanned with CamScanner